अतीतोन्मुखी समयरेखा पर आरोहणः आज के भारतीय नृत्य की विवेचना
Climbing Up the Downward Timeline: A Reflection on Indian Dance Today

जस्टिन मैकार्थी
Justin McCarthy
January 31, 2011

चमकीले रेशमी परिधान, शानदार आभूषणों में सजी-धजी, पैरों में घुँघरू और चेहरे की भावमुद्राओं और हस्तमुद्राओं के साथ हिलती-डुलती और संगीतमय लहरियों और निरंतर बजती ताल और ढोलक की थाप के साथ कलात्मक ढंग से झूमती नर्तकी एक ऐसा दृश्य प्रस्तुत करती है जो भारतीय नृत्य की पहचान है और जिसे पहली बार देखने वाले दर्शकों से लेकर कला के मर्मज्ञ दर्शक भी सराहे बिना नहीं रह सकते. जो लोग कला में दीक्षित नहीं हैं उन्हें तो यह चमत्कृत कर देने वाली अद्भुत कलाबाजी ही लगेगी, लेकिन जो इस नृत्य को पहले देख चुके हैं, उनके लिए यह चार आयामी विशिष्ट सांस्कृतिक बिंब है और जो कला के पारखी और मर्मज्ञ हैं, उनके लिए यह संप्रेषण के माध्यम की चिर-परिचित कूटों की सांकेतिक बिंब व्यवस्था है.

यह क्या है,भरतनाट्यम,कत्थक, कुचुपुड़ी या ओड़िसी? या फिर कत्थकली,मोहिनीअट्टम,कुडियट्टम या मणिपुरी नृत्य? कहा जाता है कि भाव-विभोर या विस्मित कर देने वाली इन भारतीय नृत्य शैलियों में आधुनिक और समकालीन अभिनय का इतिहास समाहित है. आज जिस रूप में यह दिखाई देता है, वह आम तौर पर या तुलनात्मक रूप में नृत्य का पुनर्निर्मित या पुनर्कल्पित नया कलात्मक रूप है, जिसमें अनुसंधान से खोजी गई,सहज वृत्ति से पाई गई और सपनों में तैरती अतीत की विविधता के रूप में अद्भुत सौंदर्य विधान है. यद्यपि इस नवशास्त्रीय नृत्य का उदय पिछली शताब्दी के पूर्वार्ध में हुआ था,लेकिन इसका संबंध इसके अपने ही अस्थायी रूप में मिटते हुए अवतारों के उलटे कालक्रम से है. उन्नीसवीं शताब्दी के अपने कोडीकरण और अर्ध-स्थिर अवस्था के ज़रिए बीसवीं शताब्दी में फिर से अवतरित नृत्य रूपों की अपनी एक श्रृंखला है, जिन्हें ऐतिहासिक रूप में मिटते अवतारों के रूप में पहचाना जा सकता है. इन्हें दरबारी और धार्मिक कलाओं के रूप में जाना जाता है और ये मध्यकाल से होते हुए प्राचीन धुँधलके में खो जाते हैं. इस अतीतोन्मुखी कालक्रम के पक्के और ठोस सबूत दृश्यात्मक पुरालेखों के रूप में मौजूद हैं. यद्यपि बीसवीं शताब्दी में लगभग सभी प्रसिद्ध नृत्यांगनाओं के दस्तावेज़ी सबूत के रूप में फ़िल्में और छायाचित्र मौजूद हैं,लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी में धुँधले और दगेरोटाइप चित्र और पेंटिंग आंशिक रूप में ही

मिलती हैं और ये भी ईस्ट इंडिया कंपनी के उन आधिकारिक संग्रहों में मिलती हैं जिनमें अक्सर नृत्य दलों और नर्तकों की धार्मिक यात्राओं को चित्रित किया गया है.उन्हें पुनर्निर्मित करने के खराब तकनीकी साधनों के कारण उनकी गंभीर परिभाषा खो गई है और हम नृत्य को मंदिरों और राजमहलों के भित्तिचित्रों और नक्काशियों, कविताओं और विस्तृत तकनीकी गुटकों में ही देख पाते हैं.

भारतीय नृत्य की पहचान तय करने के लिए उसके ऐतिहासिक संदर्भ का पता लगाना ज़रूरी है. सच तो यह है कि आज जो हम देखते हैं, सब कुछ न सही,लेकिन अधिकांश बीसवीं सदी के मध्य का ही है, जिसे आदर्श रूप में प्रस्तुत नृत्य के लिए सचेत होकर ही सँजोया गया है, लेकिन उसमें आंशिक रूप में काल्पनिक अतीत की झलक है और इसके वैशिष्ट्य को समझने के लिए यह जानना महत्वपूर्ण है.इस पुनर्निर्मित नृत्य में साकार प्रक्रिया बहुत विलक्षण है और इसमें ऐतिहासिक स्मृति चिह्नों (साहित्य, मिथक,संगीत, दर्शन आदि) को अतीतोन्मुखी विवेक दृष्टि के साथ चुनींदा रूप में प्रदर्शित किया गया है. कला के क्षेत्र में बीसवीं शताब्दी में पश्चिम का प्रभाव क्रांति के ज्ञानोदय के साथ इसके समीकरण में जुड़ता रहा.प्राचीनता के स्थान पर नवीनता को लाने की दृष्टि के बावजूद प्राचीनता का ही रूपांतरण नवीनता में होने लगा. दूसरी ओर, भारत ने बाहरी तौर पर ओढ़े हुए साम्राज्यवाद और आंतरिक रूप में विद्यमान सामंतवाद के सामयिक उत्तर के रूप में अपने प्राचीन नृत्य को नए रूप में प्रस्तुत किया. जहाँ एक ओर पश्चिम ने कायाकल्प के तर्कजाल में उलझी हुई व्यक्तिगत प्रतिभा को सामने रखा, वहीं भारत ने तथ्यपरक ऐतिहासिक क्षण को पुनर्जीवित करने की आड़ में रचनात्मक छवि को प्रच्छन्न रूप में प्रस्तुत किया.

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारतीय नृत्य द्वारा प्रस्तुत गतिशील स्वरूप के विपरीत अधिकांश नर्तक यह मानने लगे और इसी बात को लोगों के सामने रखने लगे कि नृत्य स्थिर और पावन शास्त्रवाद का विलक्षण और जीवंत उदाहरण है और यह शताब्दियों से इसी रूप में प्रचलित रहा है और नृत्य शिक्षा का स्वरूप भी कुछ ऐसा है कि अधिकांश लोग इस विचार से सहमत भी होने लगे और प्रकट रूप में इस पर निश्छलता से विश्वास भी करने लगे. यद्यपि आत्मतुष्टि के इस युग में कुछ नर्तकों को अवसर भी मिला और बहुत उत्कृष्ट कोटि के नृत्य रूप भी सामने आए,लेकिन इसके इतिहास के बारे में इसके प्रचारकों द्वारा जानबूझकर फैलाई गई अनभिज्ञता के कारण इसके स्थायित्व पर खतरा मंडराने लगा. प्रौद्योगिकीय रूप में संबद्ध विश्व-समुदाय के उदय होने के कारण शाश्वत सांस्कृतिक मूल्यों पर संदेह के बादल मँडराने लगे हैं और हममें से

अधिकांश लोग लगभग असंभव-से लगने वाले आत्मतोष के व्यामोह में रहते हुए शुद्धतावाद के भ्रम में पड़े रहते हैं, लेकिन अकादमिक स्तर पर किए जाने वाले अनेक शोध-कार्यों ने,जिसमें अधिकांश शोधार्थी अमरीकी और ब्रिटिश विश्वविद्यालयों से हैं, झद्म-प्राचीन धारणाओं को ध्वस्त करना शुरू कर दिया है और "अतीतोन्मुखी" समय-रेखा की छवि को उत्तरोत्तर आलोकित करना शुरू कर दिया है और इससे नृत्य की विरासत का सम्मोहक पुनर्निर्माण भी विनिर्मित होना शुरू हो गया है और हम सब अज्ञान के धुँधलके से बाहर आने के लिए विवश हो गए हैं.

आज हम अपने-आपको फ्रांस में छिड़े अठारहवीं शताब्दी के साहित्यिक विवाद जैसी स्थिति में उलझा हुए पाते हैं.आज यह विवाद "प्राचीन" और "आधुनिक" खेमों के बीच है. प्राचीन खेमे के लोग स्थिर श्रेण्यवाद की ओर देखते हैं. ऐतिहासिक प्रमाणों से पूरी तरह से खंडन होने के बावजूद उनका विश्वास अटल है. वे मानते और कहते हैं,"मैं मानता हूँ और बहुत-से लोग भी मानते हैं,इसलिए हमारा विश्वास अटल है" और झूठी विचारधारा की यह शक्ति इतनी प्रबल है कि वे दिखावटी "श्रेण्यवाद" के आधार पर अपनी विचारधारा को स्थापित करने का प्रयास करते हैं.

आखिर विवाद किस बात पर है? कला की अन्य विधाओं के समान भारतीय नृत्य को भी निरंतर पुनर्मूल्यांकित करने और उसके आधार पर उसे सुदृढ़ करने की आवश्यकता है. तीव्र कायाकल्प की सामान्य स्थिति ऐसी होती है जिसमें सभी कुछ निकट भविष्य में विद्यमान रहता है.इसलिए भारतीय नृत्य को भी भावी क्षण के पूर्वानुमान में प्रवीण होना चाहिए ताकि वह भविष्य में भी जीवित रह सके. सौभाग्यवश आधुनिक भारत में आने वाले युग को लेकर गंभीर आत्म-मूल्यांकन की प्रवृत्ति बढ़ रही है और विश्लेषण की यह प्रक्रिया अधिकांश महत्वपूर्ण नृत्य कार्यक्रमों के साथ आयोजित संगोष्ठियों और औपचारिक विचार-विमर्श में भी दिखाई पड़ने लगी है. परंतु इन संगोष्ठियों में की जाने वाली चर्चाओं से प्राचीन और आधुनिक खेमों के बीच का गतिरोध बहुत जल्द ही खत्म हो जाता है या फिर दूरियाँ कुछ कम हो जाती हैं. इस स्थिति को अच्छी तरह समझने के लिए तीन प्रमुख नृत्य समूहों के वैकल्पिक मॉडल पर विचार किया जा सकता है.

पहला समूह होगा "श्रेण्यवादियों" का. ये लोग बीसवीं शताब्दी के व्याकरण,भाव-भंगिमाओं और सिंगार

का दृढ़ता से पालन करते हैं. दूसरा समूह होगा "उदारवादियों" का. ये लोग नृत्य को अधिकाधिक अद्यतन संदर्भों में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं.साथ ही सर्वाधिक आवश्यक शब्द-रूपों का ध्यान भी रखते हैं. हैरानी की बात तो यह है कि तीसरा समूह होगा "समकालीनों" का. नृत्य की दृष्टि से भारतीय नर्तकों की यह नई लहर है. ये लोग या तो अपने "शास्त्रीय" अतीत को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं या फिर जानबूझकर उसका रूप ही बदल देते हैं.

पहले वर्ग के शुद्ध श्रेण्यवादी तो बहुत कम हैं.ये लोग एक ऐसी सुकुमार दुनिया में रहते हैं, जिसमें यथार्थ और काल्पनिक दोनों का सह-अस्तित्व रहता है. यथार्थ की दुनिया में होता है विशाल जनसमूह का काल्पनिक प्रभावशाली सौंदर्य और काल्पनिक दुनिया में होता है कृत्रिम रूप में निर्मित किंतु नृत्य की नवचेतना में समाहित सौंदर्यविधान.

उदारवादियों की संख्या काफ़ी ज्यादा है और ये लोग समृद्ध भी हैं.न तो ये लोग संकीर्ण होते हैं और न ही "भोंडे परंपरावादी". वास्तव में बिना जाने ही ये लोग अब और तब के बीच सूत्र जोड़ने का काम करते हैं.

विभिन्न विधाओं और विभिन्न कालखंडों के बीच मिश्रण के कारण लोग इस वर्ग को सबसे अधिक पसंद करते हैं.इनमें बृहत्तर विश्व के साथ जुड़ने की इच्छा दिखाई पड़ती है और बृहत्तर विश्व तो लगता है कि प्राचीन तत्वमीमांसा से लेकर हवाई जहाजों और विदेशियों तक सभी में समाया हुआ है!

तीसरे वर्ग के लोग हैं समकालीन. ये इस परिदृश्य में सबसे नए और विवादास्पद खिलाड़ी हैं. इनके नृत्य में राष्ट्र के अतीत, वर्तमान और भविष्य के भावों और विचारों का तानाबाना दिखाई पड़ता है. आदिम थाप से लेकर हाई-टेक स्पंदन तक सभी कुछ समाहित है. वे अति सरलीकरण के तरीके अपनाकर किसी की भी उपेक्षा कर सकते हैं, लेकिन यदि सकारात्मक ढंग से देखें तो यह वर्ग तथाकथित भारतीय नृत्य की दशा और दिशा का सूचक है और इससे भारतीय नृत्य के भावी स्वरूप का संकेत भी मिल जाता है. इस वर्ग के बहुत-से नर्तक तो आज की स्थिति में "शास्त्रीय नृत्य" की दुविधा को लेकर सचमुच ही चिंतित दिखाई पड़ते हैं.

एक आदर्श नर्तक,नृत्य-निर्देशक,अकादमिक विद्वान् और दर्शक इन सभी वर्गों से ऊपर उठा होता है. ऐसे व्यक्ति ही वस्तुतः एक सेतु की तरह अत्यंत जीवंत,किंतु भ्रामक और

विभाजित परिदृश्य में सुधार ला सकते हैं. नृत्य की अंतर्निहित भौतिक अस्थिरता ही इसकी अन्यतम विशेषता है. यदि इसे सही तौर पर लागू किया जाए तो यही असंतुलन हमें विभाजक, शब्दार्थी और विचारमूलक विभाजनों से उबार सकता है. नव-श्रेण्यवाद के माध्यम से ही हम प्राचीन गल्प का आनंद ले सकते हैं और मध्यमार्ग पर चलते हुए अस्थिरता के इस दौर में निरंतरता को बनाए रख सकते हैं, जिसकी हमें एक लंबे समय से अपेक्षा रही है और सौंदर्य के कायाकल्प के नए और विचित्र आनंद से लबालब भर सकते हैं.

जस्टिन मैकार्थी संगीतकार,नर्तक,नृत्य-निर्देशक और शिक्षक रहे हैं. वे पिछले दो दशकों से नई दिल्ली स्थित श्रीराम भारतीय कला केंद्र में भरतनाट्यम विभाग के अध्यक्ष रहे हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),रेल मंत्रालय, भारत सरकार **<malhotravk@hotmail.com>**